बयालीस के ज्वार की उन लहरों में

- हम उन दिनों घहरा रहे थे, वे उन दिनों घबरा रहे थे !
- हम उन दिनों पूरे जोश में थे, वे उन दिनों पूरे जोर में थे !
- उनकी महत्ता अस्त होने के खतरे में थी, हमारी महत्ता फिर से जन्म लेने की सम्भावना में !
- उनके साथ लगभग एक शताब्दी में संजोयी सैनिक शक्ति थी, हमारे साथ लगभग एक शताब्दी में सुलगायी विद्रोही भावना की आग !
- दाँव चूकने में उनकी मौत थी, दाँव चूकने में हमारी घोर पराजय।
- वे अपनी उखड़ती जड़ जमाने में जुटे थे, हम अपनी सदियों से उखड़ी पड़ी जड़ जमाने में !
- हमारा उखड़ना ही उनका जमना था, हमारा जमना ही उनका उखड़ना था !
- वे थे हमारे शासक अँगरेज़, हम थे उनके शासित भारतवासी !
- और यों हम दोनों 1942 में जान-जान की बाज़ी खेल रहे थे !
- हमारी देश-भक्ति का नारा था - निकल जाओ यहाँ से, उनकी सैन्य-शक्ति का उद्घोष था-क्यों निकल जायें ?
- फ़ैसले बहुत हो चुके थे, इस बार किसी एक को मिटना था, इसलिए न वे कोई कोर-कसर छोड़ रहे थे, न हम !
- अतीत साक्षी है-वे जीत गये, हम हार गये !
- वर्तमान साक्षी है - वे जीतकर हार गये, हम हारकर जीत गये !
- इतिहास साक्षी है कि वे ऐसे गये कि एक बात हो गयी !
- संसार साक्षी है कि हम ऐसे जमे कि एक चमत्कार हो गया।

8 अगस्त, 1942 को बम्बई में राष्ट्रीय महासभा ने 'भारत छोडो प्रस्ताव पास किया और 9 अगस्त, 1942 को प्रातःकाल महासभा के नेता और कार्यकर्ता देश-भर से चुन-चुनकर जेलों में बन्द कर दिये गये। हमारे शत्रुओं ने आपस में कहा-अब यह टण्टा हमेशा को मिटा और इस देश में ऐसा अब कोई नहीं बचा, जो जनता को बग़ावत की सीख दे। दो-चार भुनगे इधर-उधर हो गये हैं, पर इससे क्या; आज नहीं तो कल, हमारी छिपकलियाँ उन्हें चाट, चटखारा ले लेंगी।

भारत के शत्रुओं का सबसे बड़ा भरोसा यह था कि बयालीस की बग़ावत का नक्शा अभी जनता के सामने नहीं आया था, क्रान्ति के प्रधान पुरोहित महात्मा गाँधी के बस्ते में ही था कि वे अपने बस्ते सहित पकड़ लिये गये थे ! क्या यह सम्भव है कि गाँधी जी ने उस नक्शे की कॉपियाँ पहले ही अपने सिपाहियों में बाँट दी हों ? अँगरेज़ी शासन के मस्तिष्क ने इस प्रश्न पर विचार किया था और अन्दाज़ को लम्बी से लम्बी ढील देकर गिरफ्तारी के लिए सूची बनायी थी । उसे विश्वास था कि अब ऐसा कोई आदमी जेल से बाहर नहीं, जिसके पास वह नक्शा हो ! 'हमने पैदा होने 20 से पहले ही क्रान्ति के शिशु को दबोच लिया !' यह शासन के मस्तिष्क की वाणी थी । ओह, किसी दिन कंस भी कृष्ण के सम्बन्ध में यों ही निश्चिन्त होकर सो गया था ।

इस निश्चिन्तता में भी अँगरेज़ के मन पर एक बोझ था - इस निरीह देश पर उसके द्वारा किये गये अत्याचारों का बोझ ! वे द्वितीय महायुद्ध के दिन थे - उसे संसार में अपनी साख भी रखनी थी । भारत-मन्त्री एमरी ने इंगलैण्ड के रेडियो से संसार को अपने इस व्यापक दमन का एक 'जस्टी फ़िकेशन' दिया । उसने कहा-'कांग्रेस ने एक भयंकर क्रान्ति का प्रोग्राम बनाया था; जिसमें स्टेशन फूंकना, लाइनें तोड़ना, थानों पर कब्जा करना और तोड़-फोड़ और फूंका-फूंकी का हिंसात्मक कार्यक्रम भी था, इसीलिए हमें सब काँग्रेसियों को एक साथ पकड़ना पड़ा !'

इस भाषण ने देश को नया प्रकाश ही नहीं दिया, नया बल भी दिया। नेताओं की सामूहिक गिरफ्तारी से जनता के हृदयों में जो आग सिंधड़ी थी, वह एमरी के भाषण से भड़क उठी । जोश तो था ही, राह भी अब अंधेरे में न रही और बिना किसी नेतृत्व के जनता उभरकर खड़ी हो गयी ।

इस उभार में एक हुंकार थी-क्या कहते हो तुम, कि यह टण्टा हमेशा को मिटा और इस देश में ऐसा कोई नहीं बचा, जो जनता को बग़ावत की सीख दे । दो-चार मुनगे इधर-उधर हो गये हैं । पर इससे क्या; आज नहीं, तो कल हमारी छिपकलियाँ उन्हें चाट, चटखारा ले लेंगी !

सुनो, हमें किसी सीख की ज़रूरत नहीं । विद्रोही के नाग अब जाग उठे हैं, जो तुम्हारी इन छिपकलियों को एक ही सपाटे में सटक जायेंगे और तुम्हें ऐसा डँसेंगे कि तुम अपने वारिसों के नाम वसीयत भी न लिख सको।

यह हुंकार कोई हुंकार न थी, इसके पीछे जीवन-ज्वाला की लपलपाती लपटें थीं । अँगरेजी शासन की शक्ति के केन्द्र पुलिस-थाने, डाकघर, स्टेशन,

इन लपटों में पड़ स्वाहा हो चले। केन्द्रों का सम्बन्ध देहातों से कट गया और अंगरेज़ी शासन के हाथ-पैर सन्नाटे में आ गये। सारा देश युद्ध-भूमि में परिणत हो गया-जो न लड़े ग़द्दार।

देखते-देखते छोटे-छोटे देहातों तक की गलियाँ गूंज उठीं...

रणभेरी बज उठी वीरवर, पहनो केशरिया बाना !
मिट जाओ वतन पर इसी तरह जिस तरह शमा पर परवाना !!

माता के वीर सपूतों की
हाँ, पूतों की, हाँ पूतों की,
आज कसौटी होना है !
देखें कौन निकलता पीतल
और कोन निकलता सोना है !

उतरेगा जो आज युद्ध में वही वीर है मरदाना !
रणभेरी बज उठी वीरवर, पहनो केशरिया बाना !!

उन्हीं दिनों का एक दृश्य इस प्रकार है...

बिहार की राजधानी पटना में उस दिन कोई भी चिड़ियों की चहक सुनकर नहीं जागा। चिड़ियों के जागने से पहले ही वहाँ की गलियाँ विद्यार्थियों की प्रभात फेरी के संगीत और नारों से गूंज उठी थीं...

धन-धन है उन्हें जो भारत पै, अपना तन-मन-धन वार चूके !
भारत के लिए बेचैन हुए, भारत के लिए बलिदान हुए !!

ओह, मत्यु के प्रति छोटे-छोटे विद्यार्थियों में कैसी निश्चिन्तता थी...

शहीदों की चिताओं पर जुड़ेंगे हर बरस मेले !
वतन पर मरने वालों का यही बाकी निशाँ होगा !!

कायरता के लिए उनमें कैसी करारी ललकार थी...

गर डर है तेगे फोलादी का, तो नाम न ले आजादी का,
मातम हैं, इस जा शादी का, ये मंजर है बरबादी का,
कुछ करना है, तो करके दिखा और जीना है तो मर के दिखा,
नासूर को मेरे भर के दिखा या जौहर ही खंजर के दिखा।

कुछ करके दिखाने वालों की भीड़ दोपहर को बिहार सरकार के सेक्रेट्रियेट की ओर चली। भीड़ के पैरों तले साफ़-सुथरी, सीधी सड़क थी पर उसकी यात्रा आसान न थी। रास्ते में पुलिस की टोली और कोई

अफ़सर मिलता और भीड़ को रोककर कहता-बस लौट जाओ, पर यह सरकारी नहर न थी जो इशारों पर घटती, बढ़ती और रुकती-यह तो बरसाती नदी थी; फिर ये तो जवानी की बाढ़ के दिन थे !

अफ़सर गुस्से में भर जाता और उसके हुक्म पर सिपाही लाठियाँ बरसाते । सिर फूटते, हड्डियाँ टूटतीं, लोग बेहोश हो जाते । मरने वालों में पूरे हाथों के भी थे, तो अधूरे दिलों के भी थे । वे भी थे, जो हुक्म पाने को बेचैन रहते और वे भी थे, जो हुक्म पाकर भी कन्नी काट जाते । भीड़ कुछ छितर जाती, पर लोग फिर आ जुटते, नये नारे फूटते, जोश फिर उबाल खा जाता, भीड़ फिर आगे बढ़ने लगती ।

यों ही रुकते, बढ़ते, पिटते, उमड़ते यह भीड़ सेक्रेट्रियेट पर पहुंची तो देखा, अँगरेज़ जिलाधीश गोरखा पलटन की टुकड़ी लिये वहाँ पहले से मौजूद है । उसे देखकर कोई डरा नहीं, खिसका नहीं, उलटे लोग और भी जोश में भर गये...

नहीं रखनी सरकार, भाइयो, नहीं रखनी !
अँगरेजी सरकार भाइयो, नहीं रखनी !!

नारों की गूंज ऐसी थी कि पेड़-पत्ते तक बोल-से उठे-हिन्दुस्तान छोड़ जाओ ! क्विट इण्डिया ! इन्क़लाब ज़िन्दाबाद !

अपने राष्ट्र का तिरंगा झण्डा लिये कुछ किशोर गोल गुम्बद की ओर बढ़े, तो गोरखा फ़ौज ने दीवार की तरह अपने को सामने कर दिया ।

अँगरेज़ जिलाधीश ने पूछा-"आखिर, तुम लोग क्या चाहते हो ?"

एक विद्यार्थी ने उभरकर कहा-"हम सेक्रेट्रियेट पर अपना झण्डा लगायेंगे ।"

वहाँ के लिए यह झण्डा नहीं है, वहाँ यूनियन जैक फहराता है ।" हिन्दुस्तान की गुलामी पर उस जिलाधीश ने एक कड़वा व्यंग्य किया ।

अब वहाँ यूनियन जैक नहीं फहरा सकता, यह तिरंगा ही वहाँ फहरायेगा ।" विद्यार्थी ने कहा ।

अँगरेज़ तमतमा उठा-"ऐसा कभी नहीं हो सकता; जाओ, भाग जाओ ।"

"हम तो झण्डा फहराकर ही लौटेंगे ।" एक दूसरे विद्यार्थी ने कहा।

"हूँ ।" अँगरेज़ का अहंकार गुर्रा उठा-"तुममें जो झण्डा फहराना चाहता हो, वह आगे आये ।"

ग्यारह विद्यार्थी भीड़ से बाहर हो, एक साथ आगे बढ़ आये; उनका कार्य ही उनका उत्तर था। इन 11 में सबसे आगे जो विद्यार्थी था, उसकी देह ने अभी अपनी 14वीं वर्षगाँठ भी न मनायी थी, पर उसके कन्धों का तनाव ऐसा प्रचण्ड था कि पहाड़ के शिखर भी देखें, तो शरमा जायें।

"तुम भी फहराओगे झण्डा ?" राक्षसी क्रूरता से अंगरेज़ ज़िलाधीश ने पूछा।

"हाँ, क्यों नहीं !" भारत की आत्मा उस बालक के कण्ठ से कूक उठी।

11 भोले किशोर एक पंक्ति में खड़े थे। उनके एक ओर थी गोरखा फौज, दूसरी ओर घोड़े पर चढ़ा अँगरेज़ जिलाधीश; वातावरण सन्नाटे में था। "फ़ायर !" जिलाधीश ने आदेश दिया कि 11 गोरखे आगे बढ़े। वे आगे बढ़े कि एक साथ 11 राइफ़लें उभरकर गरजीं - "धड़ाम !"

जीते-जागते 11 राम-लक्ष्मण पल मारते धरती पर गिर पड़े, खून से लथपथ, पर शान्त !

"फ़ायर।" फिर वह चिल्लाया और सिपाहियों ने गोलियाँ दागीं - बहुत-से लोग घायल हो गिर पड़े, पर भागा कोई नहीं, पीछे हटा कोई नहीं।

"क्विट इण्डिया। भारत छोड़ो ! इन्कलाब जिन्दाबाद।" कहीं आकाश में किसी ने अपने कोमल कण्ठ से ये स्वर भरे कि भीड़ में नयी लहर आ गयी।

जाने किधर से एक विद्यार्थी सेक्रेट्रियेट के गुम्बद पर जा चढ़ा और उसने तिरंगा झण्डा फहराकर वहीं से ये नारे लगाये। अँगरेज़ जिलाधीश का मुंह एक बार तो काला पड़ गया और तब किटकिटाकर उसने कहा - "फायर !"

वह किशोर टूटते तारे-सा धरती पर आ गिरा ! अस्पताल की मेज़ पर उसने पूछा-'मेरे कहाँ गोली लगी है ?"

"छाती में," डॉक्टर ने कहा।

"तब ठीक है, मैंने पीठ पर गोली नहीं खायी !" उसने कहा और हमेशा को आँखें मूंद लीं।

इन शहीदों की देह से जो गोलियाँ निकलीं, वे 'दमदम बुलेट' थीं अन्तर्राष्ट्रीय विधान के अनुसार इन गोलियों का प्रयोग युद्धों में भी वर्जित है, पर अँगरेज़ी शासन के लिए उन दिनों न नियम थे, न पाबन्दियाँ। गोली

मारना, जेल में ठूँस देना, पीटना, घर फूँकना, गाँव उजाड़ देना और जाने क्या-क्या मामूली बात थी ।

उन्हीं के एक आदमी के शब्दों में - "पुलिस और फ़ौज को गाँवों में खुलकर खेलने के लिए छोड़ दिया था । नेशनल वारफ्रण्ट के लीडर की हैसियत से अपने जिले के गांवों में घूमते समय मुझे फ़ौज और पुलिस के अत्याचारों, जनता की सम्पत्ति की लूट-खसोट, गाँवों को जलाने, गिरफ्तारी का भय दिखाकर रुपये ऐंठने और कभी-कभी वसूली के लिए घोर यन्त्रणाएँ देने की भी अनेक रिपोटें मिली हैं ।

"पुलिस द्वारा लूटी गयी दुकानें तथा जलाये गये गाँव के गाँव मैंने अपनी आँखों से देखे और मैं मंजूर करूंगा कि वे दृश्य मरते समय भी मेरी आँखों के सामने नाचते रहेंगे । जब मैं एक सभा में सम्मिलित होने जा रहा था, तो मेरी ट्रेन एक स्टेशन पर रुकी । मैंने देखा-एक गोरा एक कुत्ते पर निशाना साध रहा है । यह निशाना चूक गया; क्योंकि कुत्ता बहुत दूर था !...

"मैंने सोचा - बिहार में इस गोरे के भाई-बिरादर ज्यादा भाग्यशाली हैं; क्योंकि उनके निशाने उन्हें बहुत ही नज़दीक मिल जाते हैं । आजकल बिहार में आदमी और कुत्ते में बहुत ज्यादा फ़र्क नहीं रह गया है ।" जो बात बिहार के सम्बन्ध में कही गयी है, वह सारे देश के सम्बन्ध में भी उतनी ही सच थी ।

यह नृशंसता किस सीमा तक बढ़ी हुई थी, इसका एक उदाहरण उसी 'पटने की छाती पर अंगारों से खुदा हुआ है ।

रामसिंह पटना के एक प्रतिष्ठित नागरिक थे । गोरे फ़ौजी घूमते-घूमते एक दिन उनके साफ़-सुथरे घर में घुस आये । उनका अपराध क्या था; यह कोई नहीं जानता, पर उन्हें जो दण्ड दिया गया, उसे सुनकर नरक का दरोगा भी झेंप जायेगा ।

लोहे के नोकदार खूटे पर, ज़बरदस्ती उन्हें गुदा के सहारे बैठाया गया और दो गोरे सिपाहियों ने उनके कन्धों पर अपना ज़ोर डालकर उन्हें तब तक दबाया, जब तक कि वह खूटा उनके पेट, कलेजे, कण्ठ और खोपड़ी को फोड़कर ऊपर नहीं निकल गया !

क्रूरता की परिसीमा तब हुई, जब ये गोरे खूटे में ठुकी उनकी लाश को अपनी किसी कलाकृति की तरह कई दिन इधर-उधर दिखाते फिरे !

यह 10 अगस्त से 15 अगस्त के बीच की बात है । उस दिन जो

बेदर्द और बेहया होकर दनादन गोलियाँ दाग़ रहे थे, उन्हें क्या पता था कि आज से ठीक 5 वर्ष बाद 15 अगस्त, 1947 को यह बेचारा यूनियन जैक यहाँ से इस तरह खिसक जायेगा, जैसे थर्ड क्लास के टिकट का मुसाफिर फर्स्ट क्लास में बैठा हो और टिकट-चैकर आ जाये, तो देखते ही चुपके से खिसक जाता है और यहाँ यही तिरंगा झण्डा इस शान से लहरायेगा कि आकाश-गंगा की लहरें भी उसकी फहरान देखने को एक बार ठहर जायेगी।

●